स्वैबनाल्प (स्विट्जरलैण्ड)
मई २४, २०००

सन्देश संख्या २३

निर्वाणषट्कम् का भावार्थ

१) मै हूँ अनाम अस्तित्व,
पर्वत का नूतन–मृदू–शीतल समीर,
आश्रय–बन्धन से मुक्त,
मैं हूँ प्रवाहशील सरिताका निर्मल नीर,
मैं देवों का शरण्य नहीं,
देवालय की छाया भी ग्राह्य नहीं,
पोथी का बोझ वरेण्य नहीं,
परम्पराओं का मर्मज्ञ नहीं,
मै बस हूँ, हूँ और हूँ।

२) मैं मंदिरसे उठता सुगंधित धुआँ नहीं,
न ही आकषक आयोजनों का आडम्बर,
मै रहता नहीं उत्कीर्ण मूर्तियों में,
पाओगे नहीं मुझे सुमधुर भजन और गीतों में,
न बँधा मैं सिद्धान्तों के लम्बे फीतों से,
न प्रज्ज्वलित हूँ अंधविश्वासों के पलीतों से,
उलझा नहीं मैं धर्मबन्धनों में,
या पुरोहितों की पावन यंत्रणाओं में,
मै तो बस हूँ, हूँ और हूँ।

३) दर्शन के जंजालों से मुक्त,
पंथों की पकड से भी मुक्त,
न अधम, न उत्तम,
न उपासक, न उपास्य,
मैं जीवन हूँ, पूर्ण रूपेण 'मुक्त',
मेरा गीत संगीत है उस सरिता का,
जो आतुर है मुक्त सागर से मिलन का,
ध्येय है जिसका सदैव चलते रहने का,
इसीलिये तो मैं हूँ, हूँ और हूँ।

४) कोई दर्शन नहीं है जीवन का,
न है विचारों की धूर्ततापूर्ण योजना।
कोई ''धर्म'' नहीं है जीवन का,
न है विशाल देवालयों में आराधना।
कोई देवता नहीं है जीवन का,
न ही भार भयानक रहस्यों का।।

५) जीवन का है न ठहराव कहीं,
न ही दारूण दुःख है चरम विनाश का।
जीवन में न है व्यथा विलास कहीं,
कहीं उन्मत्त ''प्रेम'' का विकार नहीं।
जीवन में शुभ या अशुभ का स्थान नहीं,
अनिच्छित पाप के लिये क्रूर दण्ड का विधान नहीं।।

६) जीवन प्रदान करता नहीं सांत्वना कहीं,
न ही विश्रान्ति इसे विस्मृति की समाधि में।
जीवन में न है जड चेतन का द्वन्द्व कहीं,
यहाँ कम अकम का क्रूर विभेद नहीं।
जीवन में मृत्यु का कोई स्थान नहीं,
काल की प्रतिच्छाया में एकाकीपन की रिक्तता नहीं।
जो शाश्वतत्व में जीता है मानव वही स्वतन्त्र है,
जीवन उसी के लिये है।।

जब चित्तवृत्ति की आपाधापी और विरोधाभास समाप्त हो जाते हैं तब समझदारी की ऊर्जा असाधारण रूप से घनीभूत होकर प्रकट होती है। मानसिक प्रदूषण के बिना क्रियायोग की अनुभूति करें।

जय क्रियायोग